हिन्दी प्रकोष्ठ | संवादपत्र

भाषायी

द्वितीय अंक 2023

विज्ञानं ब्रह्म

:: संपादक ::
डॉ. अमिताभ विक्रम द्विवेदी
(नोडल अधिकारी, हिन्दी प्रकोष्ठ)

:: सह-संपादक ::
मिलिन्द शुक्ल
(छात्र सचिव, हिन्दी प्रकोष्ठ)

:: संरक्षक ::
प्रो. प्रगति कुमार
(माननीय कुलपति)

आधुनिक हिन्दी साहित्य को समृद्धशाली बनाने का श्रेय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी को जाता है। इनके विशिष्ट योगदान की जानकारी इसी बात से प्राप्त होती है की हिन्दी साहित्य में एक युग आचार्य जी के नाम से भी है जिसे 'द्विवेदी युग' कहा जाता है। द्विवेदी युग हिंदी साहित्य में भारतेंदु युग के बाद का समय है। इस युग का नाम महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम से रखा गया है। उन्होंने सरस्वती का अठारह वर्षों तक संपादन कर हिन्दी पत्रकारिता में एक महान कीर्तिमान स्थापित किया था। वे खड़ीबोली हिन्दी की कविता के प्रारंभिक और महत्वपूर्ण कवि थे। आधुनिक हिन्दी कहानी उन्हीं के प्रयत्नों से एक साहित्यिक विधा के रूप में मान्यता प्राप्त कर सकी थी। वे भाषाशास्त्री थे, अनुवादक थे, इतिहासज्ञ थे, अर्थशास्त्री थे तथा विज्ञान में भी गहरी रुचि रखने वाले थे। अतः वे युगांतर लाने वाले साहित्यकार थे या दूसरे शब्दों में कहें, युग निर्माता थे।

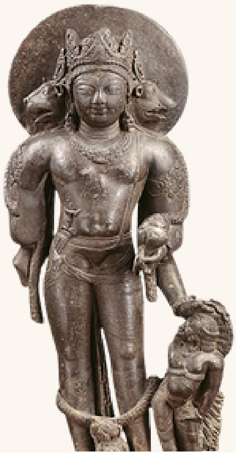

• कार्कोट साम्राज्य के समय की वैकुण्ठ विष्णु की प्रतिमा

हिन्दी प्रकोष्ठ
श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय
कटड़ा, संघशासित जम्मू एवं कश्मीर,
भारत-182320
hindicell.smvdu.ac.in
hindi.cell@smvdu.ac.in

अनुक्रमणिका

1. भाषिक विमर्श 1
2. विस्मृत कवि 4
3. लोक उत्सव 5
4. भाषा कथा 8
5. भाषा-बोली विशेष 10
6. रोचक जानकारी 11
7. लेख विशेष 12
8. बशोली चित्रकला 19

अक्षरं ब्रह्म परमं

परम अक्षर ब्रह्म है।

हिन्दी में आगत विदेशी ध्वनियां और उनमें परिवर्तन संबंधी नियम

हिन्दी में अरबी, फारसी, तुर्की आदि मुस्लिम देशों तथा अँग्रेजी भाषा को कतिपय ध्वनियाँ आयी है जो आगत विदेशी ध्वनियाँ' कहलाती हैं। इन्हें सुविधा को दृष्टि से दो भागों से विभाजित कर सकते हैं- (क) अरबी-फारसी ध्वनियाँ और (ख) अंग्रेजी ध्वनियाँ ।

(क) अरबी-फारसी ध्वनियाँ- अरबी फारसी के अनेकानेक शब्द आज हिन्दी में व्यवहत होते हैं, जिनमें मे बहुत से शब्द ऐसे हैं, जिनकी ध्वनियों में हिन्दी की ध्वनियों से पूर्णतया साम्य है। अतएव उनमें कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं हुआ है। जैसे- (आ) आदमी, खुदा, हलवा, (इ) इज्जत, इरादा (ई) ईमान, ईजाद (उ), उस्ताद; (ऊ) ऊदाः (ए) एहसान, सफेद (ओ) तोता, मोम आदि स्वर और (क्) किताब (ग्) गर्दा, (त्) ताज, (द) दूरबीन, (प्) पेशाब, (ब्) बाग, (म्) मजदूर, (व्) वकालत आदि व्यंजन। परन्तु कुछ ऐसी भी आगत ध्वनियाँ हैं, जो हिन्दी में पहले नहीं थी किन्तु जिनका प्रयोग अब होने लगा है। ऐसी अरबी-फारसी की ध्वनियाँ निम्नलिखित हैं-

(1) क- जैसे कायदा, इलाका, काफिला आदि।
(2) ख- जैसे खराब, अखबार, खून आदि।
(3) ग- जैसे गरीब, गजल, गवन, आदि।
(4) ज- जैसे जंजीर, मिजाज, जरूरत आदि।
(5) फ- जैसे फौरन फर्क, फ़ौज आदि।

अरबी-फारसी की बहुत-सी ऐसी ध्वनियों का प्रयोग भी हिन्दी में होता है, जिनमें पर्याप्त परिवर्तन दिखाई देता है। ये परिवर्तन सम्बन्धी नियम इस प्रकार हैं-

(i) स्वर-परिवर्तन सम्बन्धी नियम- (अ) फारसी में 'अ' विवृत अग्र स्वर है और उसका उच्चारण "अ" नार अदाज" की तरह होता है, किन्तु हिन्दी में आकर यह अर्द्ध-विवृत मध्य-स्वर हो जाता है जैसे अनार, अन्दाज आदि। (अ, इ) फारसी में इसका उच्चारण अलग ही होता है, किन्तु हिन्दी में आकर यह'ए' हो जाता है। जैसे फारसी "मइद 'ह्" का हिन्दी में 'मैदा', फारसी "श 'इतान" का हिन्दी में 'शैतान' (अ, उ) फारसी में इनका उच्चारण अलग-अलग ही होता है, जबकि हिन्दी में इसका उच्चारण 'ओ' हो जाता है; जैसे- फारसी "फ 'उज" का हिन्दी 'फौज', फारसी "श 'उकीन" का हिन्दी में 'शौकीन', फारसी "द 'उलत" का हिन्दी में दौलत' होना आदि।

(ii) व्यंजन-परिवर्तन सम्बन्धी नियम- अरबी-फारसी के कतिपय व्यंजन भी हिन्दी में आकार परिवर्तित ढंग से इस प्रकार उच्चरित होते हैं। जैसे-

(1) फारसी का दन्त्य संघर्षी 'स्वाद' हिन्दी में आकर वर्त्स्य संघर्षी हो जाता है। यथा फारसी साबुन का हिन्दी साबुन आदि।
(2) फारसी की जे, जोय, जाल और ज्वाद ध्वनियों हिन्दी में आकर सभी 'ज' हो जाती है।

यथा— रोज, जाहिर, जात, जालिम आदि।
(3) फारसी में 'न' दन्त्य है, किन्तु हिन्दी में वह वर्त्स्य हो जाता है। यथा— नौकर, दुनियाँ आदि।
(4) फारसी में 'च्, ज्, य्, श्' सभी ध्वनियाँ तालव्य वर्त्स्य हैं, किन्तु हिन्दी में आकर ये तालव्य हो जाती है। यथा- अचार, जंजीर, याद, शीशा आदि।
5) फारसी में 'र्, ल्' ध्वनियाँ भी तालव्य-वर्त्स्य हैं, किन्तु हिन्दी में आकर वे वर्त्स्य हो जाती हैं। यथा फारसी 'चर्खह' हिन्दी 'चरखा', फारसी 'लिफाफा' हिन्दी 'लिफाफा' आदि।
(6) अरबी-फारसी के शब्दान्त में आने वाली 'ह' ध्वनि हिन्दी में आकर 'आ' हो जाती है। यथा— तमाश का तमाशा, इरादह का इरादा आदि ।
(7) अरबी-फारसी की 'हमजा-अलिफ' जहाँ शब्दों के मध्य में आती है, वहाँ वह हिन्दी में 'आ' हो जाती है। यथा— बाद, इनाम, मशाल आदि।

(ख) अँग्रेजी ध्वनियाँ—अँग्रेजी की ऐसी बहुत-सी ध्वनियाँ हिन्दी में आई हैं, जो हिन्दी ध्वनियों से पूर्ण साम्य रखती हैं। जैसे—(आ) क्लास (Class), (ई) टीम (Team), (ऊ) जून (June), (इ) गिलास (Glass), (ब्) बैंक (Bank), (न्) नम्बर (Number), (म्) मोटर (Motor), (य्) यूनीवर्सिटी (University), (स्) साईकिल (Cycle), (ज) जीरो (Zero) आदि। परन्तु कतिपय ऐसी भी ध्वनियाँ हिन्दी में आई हैं, जो हिन्दी में कुछ परिवर्तित ढंग से बोली जाती हैं। इनके परिवर्तन सम्बन्धी नियम इस प्रकार हैं-

(i) स्वर-परिवर्तन सम्बन्धी नियम-
(1) अँग्रेजी 'a' का उच्चारण हिन्दी में 'अ' या 'आ' हो जाता है। जैसे—Academy (एकेडमी) का अकादमी आदि।
(2) अँग्रेजी 'e' का उच्चारण हिन्दी में 'ए' हो जाता है। जैसे—College (कॉलिज) का कॉलेज आदि ।
(3) अँग्रेजी 'e' का उच्चारण हिन्दी में कहीं-कहीं 'इ' भी हो जाता है। जैसे— Deputy का डिप्टी, Hostel का हॉस्टिल आदि।
(4) अँग्रेजी 'o' का उच्चारण हिन्दी में कहीं 'आ' और कहीं ' औ' हो जाता है। जैसे—Doctor का डाक्टर, Box का बौक्स, Office का ऑफिस आदि ।
(5) अँग्रेजी 'i' का उच्चारण हिन्दी में कहीं 'इ', कहीं 'ई' और कहीं 'अ' की तरह होता है। जैसे—Nib का निब, Mill का मील, Officer का अफसर आदि ।
(6) अँग्रेजी 'ai' का उच्चारण हिन्दी में 'ए' हो जाता है। जैसे—Mail का मेल, Jail का जेल आदि ।
(7) अँग्रेजी 'ou' का उच्चारण हिन्दी में 'ओ' हो जाता है। जैसे—Court का कोर्ट आदि ।
(8) अँग्रेजी 'i' और 'y' का उच्चारण हिन्दी में ' आइ' हो जाता है। जैसे—Pipe का पाइप, Type का टाइप, Time का टाइम आदि ।
(9) अँग्रेजी 'ou' का उच्चारण हिन्दी में ' औ' भी हो जाता है। जैसे—Pound का पौण्ड आदि ।

(ii) व्यंजन परिवर्तन सम्बन्धी नियम—
(1) अँग्रेजी की 'ट्', 'ड्' (t, d) वर्त्स्य ध्वनियाँ हिन्दी में आकर कहीं तो दन्त्य त्, द् हो जाती हैं और कहीं मूर्धन्य द्, ड् हो जाती हैं। जैसे—दन्त्य — October का अक्टूबर, Dozen का दर्जन और मूर्धन्य — Tax का टैक्स, Doctor का डॉक्टर आदि।
(2) अँग्रेजी की 'थ' (th) और 'द' (th) ध्वनियाँ दन्त्य-संघर्षी हैं, जबकि हिन्दी में वे दन्त्य-स्पर्शी हो जाती हैं। जैसे— Thesis का थीसिस, Thermometer का थर्मामीटर, Father का फादर आदि।
(3) अँग्रेजी की v और w दोनों ध्वनियाँ हिन्दी में 'व' हो जाती हैं। जैसे—Overcoat का ओवरकोट, Waggon का वैगन आदि।
(4) अँग्रेजी का 'क' (k) हिन्दी में 'ग' हो जाता है। जैसे—Cork का काग आदि।
(5) अँग्रेजी के 'र्' (r) के स्थान पर हिन्दी में कहीं-कहीं 'ड़' हो जाता है। जैसे—Rubber का रबड़, Butcher का बूचड़ आदि ।
(6) अँग्रेजी का 'ह' (h) हिन्दी में कहीं-कहीं 'अ' हो जाता है। जैसे—Hospital का अस्पताल आदि ।
(7) अँग्रेजी के मध्यवर्ती 'र' (r) का हिन्दी में आकर कहीं-कहीं लोप हो जाता है। जैसे—Report का रपट, Drawers का दराज, Order का आडर, Orderly का अर्दली आदि।
(8) अँग्रेजी के कुछ शब्दों में व्यंजन के पूर्व या शब्दान्त में 'र' (r) का उच्चारण नहीं होता, किन्तु हिन्दी में इसको बोला जाता है, जैसे—बुशर्ट, ओवरकोट, ओवरसियर, पार्क, कॉलर आदि शब्दों में अँग्रेजी में 'र' नहीं बोला 'जाता है, जबकि हिन्दी में इसका उच्चारण किया जाता है।

हिन्दी ध्वनियों की उत्पत्ति- भाषा-विज्ञान में उत्पत्ति से तात्पर्य भाषा-विशेष की ध्वनियों का पूर्वज-भाषाओं के रूप से है । कतिपय शब्दों में ध्वनि-विशेष सुरक्षित रहती है और कतिपय शब्दों में रूप बदल लेती है। इस बदले हुए रूप को उत्पत्ति अथवा विकास का नाम दिया जाता है। उदाहरणार्थ-संस्कृत स्तम्भ हिन्दी में खम्भ बन गया है। इसका अर्थ यह हुआ कि 'ख' की उत्पत्ति 'स्त' से हुई है। उपर्युक्त ध्वनियों के विवेचन से यह तथ्य भली प्रकार उभरकर सामने आ जाता है। इस उत्पत्ति या विकास की प्रक्रिया में निम्नलिखित विशेषताएँ भी दृष्टिगत होती हैं-

(1) अर्द्ध-तत्सम शब्दों के व्यंजन ध्वनियों के प्रति अनुराग के फलस्वरूप पास-पास में आये स्वरों के समीकरण की प्रवृत्ति होती है। उदाहरणार्थ-तीक्षण शब्द को लें तो प्राकृत भाषा के नियमों के अनुसार — तीक्ष्ण = तिक्ख = तीखा रूप बनना चाहिए था, परन्तु इसका तिमिण रूप भी हिन्दी में प्रचलित हो गया। यह व्यंजन ध्वनियों के प्रति अनुराग के कारण है। इसी प्रकार चन्द्र, इन्द्र शब्दों के चाँद, इंद अथवा इद रूप बनने चाहिए थे, परन्तु पास-पास में आये स्वरों के समीकरण से चन्दर, इन्दर रूप बन गये।
(2) बीसवीं शताब्दी में जनसाधारण को महत्त्व देने के फलस्वरूप भाषा की ध्वनियों को विकसित करने की इन प्रणालियों का जन्म हुआ— (क) पूर्ण स्वर को दीर्घ बनाकर द्वित्व की समाप्ति, (ख) महाप्राण ध्वनियों की सुरक्षा, (ग) स्वर-भक्ति, (घ) समीकरण तथा (ङ) विपर्यय।

जसवंत सिंह

ये बघेल वंश के तथा फर्रुखाबाद जनपद के अन्तर्गत स्थित तिरवों के राजा और संस्कृत, फ़ारसी आदि के अच्छे ज्ञाता थे। इन्होंने श्रृंगारशिरोमणि' ग्रन्थ की रचना की, जिसकी अनेक प्रतियाँ उपलब्ध हुई हैं। इनकी मृत्यु संवत् 1871 में हुई।

मल्ल

इन कवि का पूरा नाम टोडरमल था। ये 'मल्ल' उपनाम का छाप के रूप में प्रयोग करते थे। इनके विषय में केवल इतना ज्ञात है कि ये भगवन्तराय खींची के आश्रित थे। इनके कुछ स्फुट छन्द ही उपलब्ध होते हैं।

गिरिधर दास

गिरिधरदास, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के पिता बाबू गोपालचन्द्र अग्रवाल का साहित्यिक नाम था। गिरिधरदास का जन्म काशी के सम्पन्न वैश्य परिवार में पौष अमावस्या संवत् 1890 में हुआ था और वहीं वैशाख शुक्ल सप्तमी संवत् 1917 को 27 वर्ष की अल्पायु में निधन हुआ। वे अत्यन्त भावुक साहित्यकार थे और इस अल्पायु में ही उन्होंने 400 ग्रन्थों की रचना की।

ग्वाल

ग्वाल रीतिकाल के अन्तिम प्रतिष्ठित आचार्यकवि माने जाते हैं। इनका जन्म मार्गशीर्ष शुक्ल द्वितीया संवत् 1848 को वृन्दावन में सेवाराम राय नामक ब्रह्मभट्ट (बन्दीजन) के घर हुआ था। ये नामानरेश जसवन्तसिंह और भरपूरसिंह, अमृतसर के लहनासिंह, लाहौरनरेश महाराजा रणजीतसिंह तथा सुकेतमण्डी के अधिपति के आश्रय में रहे। अन्त में रामपुर रियासत के आश्रय में रहे और यहीं भाद्रपद शुक्ल एकादशी संवत् 1924 को उन्होंने अन्तिम श्वास ली। ग्वाल की गणना रीतिकाल के सिद्धहस्त कवियों में की जाती है। भक्तभावन विजयविनोद, हम्मीरहठ, रसिकानन्द, साहित्यानन्द, रसरंग, कविदर्पण ग्वाल की प्रतिष्ठित रचनाएँ हैं। भक्तभावन में संकलित यमुनालहरी, ऋऋतुवर्णन, नखशिख आदि एक शताब्दी पूर्व प्रकाशित हुए थे। विगत दो दशकों में उनकी साहित्यिक कृतियों की ओर भी विद्वानों की दृष्टि गयी है। परिणामतः भक्तभावन, विजयविनोद, रसरंग, कविदर्पण तथा हम्मीरहठ का प्रकाशन हुआ है।

जोयसी

इस कवि के विषय में कोई भी सूचना उपलब्ध नहीं है। हिन्दी जगत को इनका एक ही सर्वया पता है जो अत्यन्त विशद है। इसे कदाचित सुब्बासिंह 'श्रीधर रचित 'विद्वन्मोदतरंगिणी' (संवत् 1884) में प्रथम बार संकलित किया गया था।

महापर्व छठ

सूर्योपासना का अनुपम लोकपर्व छठ व्रत किए जाने की पौराणिक परिपाटी है। यह पर्व चैत्र व कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की षष्ठी को प्रवृद्ध मनाया जाता है। चैत्र शुक्ल पक्ष षष्ठी पर मनाये जाने वाले छठ पर्व को चैती छठ और कार्तिक शुक्ल पक्ष षष्ठी पर मनाये जाने वाले पर्व को कार्तिकी छठ कहा जाता है। इस पर्व का अन्य नाम छठ, छठ व्रत, छठ, छठी मइया की पूजा, रनबे माय पूजा, छठ पर्व, डाला छठ, सूर्य षष्ठी आदि है। बिहार, झारखण्ड, पश्चिम बंगाल, पूर्वी उत्तर प्रदेश और नेपाल के तराई क्षेत्रों में मनाया जाने वाला यह पर्व एक निर्जला व्रत है। यह काली पूजा अर्थात दीप- बली के छह दिन बाद कार्तिक शुक्ल पक्ष की चतुर्थी तिथि, पंचमी तिथि, षष्ठी तिथि और सप्तमी तिथि तक मनाया जाता है। दीपवली के बाद मनाये जाने वाले इस चार दिवसीय व्रत की सबसे कठिन और महत्त्वपूर्ण रात्रि कार्तिक शुक्ल पक्ष की होती है। कार्तिक शुक्ल पक्ष के षष्ठी को यह व्रत मनाये जाने के कारण इसका नामकरण छठ व्रत पड़ा।

पृथ्वी पर जीवन की देयताओं को बहाल करने के लिए धन्यवाद ज्ञापन करने के उद्देश्य से छठ पूजा प्रकृति, जल, वायु, सूर्य और उनकी बहन छठी मइया को समर्पित है। इस पर्व में पार्वती अर्थात शक्ति के छठे स्वरूप भगवान सूर्य की बहन छठी मैया को देवी के रूप में पूजा जाता है। छठ ष्टी का अपभ्रंश है। षष्टी देवी को कात्यायनी माता के नाम से भी जाना जाता है। नवरात्रि के छठे दिन में भी षष्ठी माता के पूजन की परंपरा है। सूर्य की शक्तियों का मुख्य स्रोत उनकी पत्नी ऊषा और प्रत्यूषा है। छठ में सूर्य के साथ-साथ दोनों शक्तियों की संयुक्त आराधना होती है। प्रातः काल में सूर्य की पहली किरण अर्थात ऊषा और सायंकाल में सूर्य की अंतिम किरण अर्थात प्रत्यूषा को अर्घ्य देकर दोनों का नमन किया जाता है। भारत में सूर्योपासना का प्रचलन अत्यंत प्राचीन काल से है। सूर्य की महत्ता का उल्लेख संसार के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद में मिलता है।

वेदों के साथ ही उपनिषद आदि ग्रन्थों में भी इसका बृहत उल्लेख प्राप्त है। यास्काचार्य ने अपने निरुक्त में सूर्य को स्थानीय देवताओं में पहले स्थान पर रखा है। परंतु पौराणिक ग्रंथों में सूर्य के मानवीय रूप की अभिव्यक्ति की गई है, और उनकी महिमा का वर्णन भगवान के रूप में किया गया है, जिसने कालान्तर में सूर्य की मूर्ति पूजा का रूप ले लिया। धीरे-धीरे सूर्य पूजा का प्रचलन और अधिक हो गया। और अनेक स्थानों पर सूर्यदेव के मंदिर भी बनाए गए। सूर्य और इसकी उपासना का विस्तृत वर्णन विष्णु पुराण, भागवत पुराण, ब्रह्म वैवर्त पुराण आदि में अंकित है। पौराणिक ग्रंथों में सूर्य को आरोग्य का देवता भी माना गया है। सूर्य की किरणों में अनेक रोगों को नष्ट करने की क्षमता है। अनुसंधान के क्रम में कुछ विशेष दिनों पर इसका प्रभाव विशेष पाया गया। वर्तमान में प्रचलित छठ के पावन दिनों में सूर्य के विशेष प्रभाव को आधुनिक विज्ञान ने भी स्वीकार किया है कि षष्ठी तिथि अर्थात छठ को एक विशेष खगोलीय परिवर्तन होता है। इस समय सूर्य की पराबैगनी किरणें पृथ्वी की सतह पर सामान्य से अधिक मात्रा में एकत्र हो जाती हैं। इस कारण इसके सम्भावित कुप्रभावों से मानव की यथासम्भव रक्षा करने का सामर्थ्य छठ व्रत के अनुष्ठानों के पालन के माध्यम से प्राप्त होता है।

यही कारण है कि छठ पर्व के समय मानव पर खुले आसमान के तले जल में खड़े होकर अर्घ्य देते हुए सूर्य स्नान करने से शरीर में पड़ने वाले सूर्य किरणों के सकारात्मक प्रभाव को महता प्रदान करने, सूर्य को धन्यवाद ज्ञापन करने के लिए छठ पर्व की परंपरा की शुरुआत हुई। मान्यता है कि महाभारत काल में सबसे पहले सूर्यपुत्र कर्ण ने सूर्यदेव की पूजा आरंभ की थी। भगवान सूर्य के परम भक्त कर्ण प्रतिदिन घण्टों कमर तक पानी में खड़े होकर सूर्यदेव को अर्घ्य देते थे। सूर्य कृपा से ही वे महान योद्धा बने थे। आज भी छठ में अर्घ्य दान की कर्ण की यही पद्धति प्रचलित है। एक मान्यता के अनुसार लंका विजय के बाद रामराज्य की स्थापना के दिन कार्तिक शुक्ल षष्ठी को भगवान श्रीराम और माता सीता ने विधिवत उपवास कर सूर्यदेव की आराधना की। सप्तमी को सूर्योदय के समय पुनः अनुष्ठान कर सूर्यदेव से आशीर्वाद प्राप्त किया था।

ऐसी भी मान्यता है कि माता सीता ने त्रेतायुग में मुंगेर में यह छठ मनाया था, इसके बाद से ही इस व्रत का आरंभ हुआ। मुंगेर में गंगा के बीच में एक शिलाखंड पर स्थित है, जो सीता मनपत्थर सीताचरण मंदिर के लिए जाना जाता है। छठ पूजा की परम्परा और उसके महत्त्व का प्रतिपादन करने वाली अनेक पौराणिक और लौकिक कथाएँ प्रचलित हैं, उनमें से एक कथा के अनुसार प्रथम देवासुर संग्राम में असुरों के हाथों देव- ताओं के हार जाने पर देव माता अदिति ने तेजस्वी पुत्र की प्राप्ति के लिए देवारण्य के देव सूर्य मंदिर में रनबे (छठी मैया) की आराधना की। रनवे अदिति की पुत्री ही थी, लेकिन पुत्र प्राप्ति की कामना से अदिति ने अपनी पुत्री की आराधना की थी। तब प्रसन्न होकर छठी मैया ने उन्हें सर्वगुण संपन्न तेजस्वी पुत्र होने का वरदान दिया था। इसके बाद अदिति के आदित्य कहे जाने वाले पुत्र हुए, जिन्होंने असुरों पर देवताओं को विजय दिलायी। कुछ कथाओं में इस व्रत के प्रभाव से अदिति को वामन नामक पुत्र प्राप्त होने की बात कही गई है।

एक अन्य कथा महाभारत काल के पांडवों से जुड़ी हुई है। कथा के अनुसार पांडवों के अपना सारा राजपाट द्यूत क्रीड़ा में हार जाने पर श्रीकृष्ण द्वारा बताये जाने पर द्रौपदी ने छठ व्रत रखा, तो उनकी समस्त मनोकामनाएँ पूर्ण हुई तथा पांडवों को उनका राज पाट वापस मिला। कुछ कथाओं में पांडवों की पत्नी द्रौपदी द्वारा भी सूर्य की पूजा करने का उल्लेख है। वे अपने परिजनों के उत्तम स्वास्थ्य की कामना और लम्बी उम्र के लिए नियमित सूर्य पूजा करती बीं। लोक परम्परा के अनुसार सूर्यदेव और छठी मइया का सम्बन्ध भाई-बहन का है। लोक मातृका षष्ठी की पहली पूजा सूर्य ने ही की थी। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार भगवान श्रीकृष्ण के पौत्र शाम्ब को कुष्ठ रोग हो जाने पर इस रोग से मुक्ति के लिए विशेष सूर्योपासना की गई थी, जिसके लिए शाक्य द्वीप से ब्राह्मणों को बुलाया गया था। एक अन्य कथा के अनुसार संतानहीन राजा प्रियवद को महर्षि कश्यप ने पुत्रेष्टि यज्ञ कराकर उनकी पत्नी मालिनी को यज्ञाहुति के लिए बनाई गई खीर दी। इसके प्रभाव से उन्हें पुत्र हुआ, परंतु वह मृत पैदा हुआ। प्रियवद पुत्र को लेकर श्मशान गये और पुत्र वियोग में प्राण त्यागने लगे। उसी वक्त ब्रह्मा की मानस कन्या देवसेना प्रकट हुई और कहा कि सृष्टि की मूल प्रवृत्ति के छठे अंश से उत्पन्न होने के कारण में षष्ठी कहलाती हूँ। आप मेरी पूजा करें तथा लोगों को भी पूजा के प्रति प्रेरित करें। राजा ने पुत्र इच्छा से देवी षष्ठी का व्रत किया और उन्हें पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। यह पूजा कार्तिक शुक्ल षष्ठी को हुई थी।

“

काल स्वयं मुझ से डरा है,
मैं काल से नहीं,
कालेपानी का कालकूट पीकर,
काल से कराल स्तंभों को झकझोर कर
मैं बार-बार लौट आया हूँ,
और फिर भी मैं जीवित हूँ।
हारी मृत्यु है, मैं नहीं......

- वीर सावरकर

”

भाषा कथा

तमिल कथाओं में द्रविड़ भाषा का विकास महर्षि अगस्त्य से माना गया है। अगस्त्य ही उत्तर भारत से दक्षिण गए और तमिल का व्याकरण लिखा तमिल परम्परा के अनुसार संस्कृत और द्रविड़ भाषाओं का स्रोत एक है। कथा है कि शिव-पार्वती के विवाह के समय दक्षिण और उत्तर के सभी ऋषि-मुनि हिमालय पर एकत्रित हुए जिससे पृथ्वी का सन्तुलन बिगड़ गया। तब देवताओं ने भगवान शिव से प्रार्थना की कि एक ऐसा तपस्वी दक्षिण भेजे जिनके आकर्षण से लोग दक्षिण जा सके। भगवान शिव ने अगस्त्य को दक्षिण दिशा में जाने का निर्देश दिया। अगस्त्य ने कहा कि मैं दक्षिण दिशा की भाषा नहीं जानता वहाँ जाकर क्या करूंगा। इस पर शिवजी ने अपनी बायी और अगस्त्य को और दक्षिण की ओर पाणिनि को खड़ा कर डमरू पर थाप दी। बायी और की थाप से तमिल और दायीं ओर की थाप से संस्कृत व्याकरण बना। अगस्त्य ने उसी नाद के आधार पर तमिल व्याकरण अगस्त्यम् लिखा जिस पर तमिल व्याकरण तुलकाप्पियम की रचना अगस्त्य के शिष्य ने की। तमिल वैयाकरण अगतियार अगस्त्य ही है।

अगस्त्य की दक्षिण यात्रा का उल्लेख उत्तर भारतीय कथानकों में भी मिलता है। अगस्त्य के दक्षिण जाते समय विन्ध्य द्वारा प्रणाम और अगस्त्य के वापस होने तक भूमि पर रहने की कथा उत्तर भारतीय ग्रन्थों में मिलती है। तमिल शास्त्र के अनुसार अगस्त्य ही गंगा की धारा से कावेरी को निकाल कर लेगए जिसे दक्षिण की गंगा कहा गया है। अगस्त्य प्राचीन ऋषि है। ऋग्वेद में भी उनका उल्लेख है। अगरस्य नामक तारा दक्षिण में ही माना जाता है।

सार्थक पूंजी

मनुष्य के पास सबसे बड़ी पूँजी सद्गुणों की है। जिसके पास जितने सद्गुण हैं, वह उतना ही बड़ा अमीर है। धन के बदले बाजार में हर चीज खरीदी जा सकती है। इसी प्रकार सद्गुणों की पूँजी से किसी भी दिशा में अभीष्ट प्रगति की जा सकती है। जिसके भीतर सद्गुणों की पूँजी भरी पड़ी है, आत्मबल और आत्मविश्वास उसे देवी सहायता की तरह सदा प्रगति का मार्ग दिखाते हैं। अपने मधुर स्वभाव के कारण वह जहाँ भी जाता है, वहीं अपना स्थान बना लेता है। अपनी विशेषताओं से वह सभी को प्रभावित करता है और सभी की सहानुभूति पाता है। दूसरों को प्रभावित करने और अपनी सफलता का प्रधान कारण तो अपने सद्गुण ही होते हैं। जिसके पास यह विशेषता होगी, उसके लिए पराये अपने बन जाएँगे और शत्रुओं को मित्र बनने में देर न लगेगी। जीवन का आधार स्तंभ सद्गुण है। अपने गुण-कर्म-स्वभाव को श्रेष्ठ बना लेना, अपनी आदतों को श्रेष्ठ सज्जनों की तरह डाल देना, वस्तुतः ऐसी बड़ी सफलता है, जिसकी तुलना किसी भी अन्य सांसारिक लाभ से नहीं की जा सकती। सद्गुणों के विकास का उचित मार्ग यह है कि उन्हीं के संबंध में विशेष रूप से विचार किया करें, वैसा ही पढ़ें, वैसा ही सुनें, वैसा ही कहें, वैसा ही सोचें जो सद्गुणों को बढ़ाने में, सत्प्रवृत्तियों को ऊँचा उठाने में सहायक हो।

आकिञ्चन्ये न मोक्षोऽस्ति किञ्चन्ये नास्ति बन्धनम्।
किञ्चन्ये चेतरे चैव जन्तुर्ज्ञानेन मुच्यते।।

दरिद्रता में मोक्ष नहीं, और संपन्नता में कोई बन्धन नहीं। किन्तु दरिद्रता हो या संपन्नता, मनुष्य ज्ञान से ही मुक्ति पाता है।

(महाभारत शान्तिपर्व १२-३२-५)

मराठी भाषा के विषय में

मराठी आधुनिक महाराष्ट्र की भाषा है। बम्बई. पूना, बरार, नागपुर तथा मध्यप्रदेश के पश्चिमी भाग में यह भाषा प्रचलित है। यह अत्यन्त सम्पन्न भाषा है। इसके बोलने वालों की संख्या लगभग साढ़े चार करोड़ से अधिक है। इस भाषा की लिपि देवनागरी है जिसे बाल बोध कहा जाता है। मराठी में संस्कृत की तत्सम शब्दावली का बाहुल्य है। इसका उच्चारण भी हिन्दी के निकट है। तथा कुछ ध्वनिगत विशेषतायें ही मिलती हैं यथा ॠ का र, न का ण और स का श मिलता है। च, ज, झ क्रमशः स्म द्ज, ध्झ हो गए हैं। मराठी में संस्कृत की भाँति तीन लिंग होते हैं पर वचन दो हैं कारक परसर्गों में भी हिन्दी से समानता है। क्रियाओं में वर्तमान- त्, भूतकालिक-ल और भविष्यत ल् भी हिन्दी की अलग-अलग बोलियों के समान है। भोजपुरी का आइल, गइल, रूप मराठी में भी मिलता है।

मराठी का विकास 10वीं शती से ही मिलने लगता है। इसका विकास हिन्दी के समान्तर हुआ है और दोनों भाषाओं में साहित्यिक प्रवृत्तियों में भी समानता है। संत ज्ञानदेव और नामदेव मराठी के श्रेष्ठ कवियों में है। उनके अतिरिक्त तुकाराम एकनाथ और रामदास भी मराठी के प्रमुख संत कवि रहे हैं। इन कवियों ने मराठी ही नहीं हिन्दी में भी पदों की रचना करके राष्ट्रीय एकता के लिये हिन्दी का महत्त्व स्वीकार किया था। आधुनिक काल में मुम्बई भारत का श्रेष्ठतम महानगर बना और पूरे देश से यहाँ लोग आने लगे। इसके परिणामस्वरूप मराठी भाषा और साहित्य पर भी प्रभाव पड़ा। संस्कृति, शिक्षा एवं साहित्य का केन्द्र बनने के साथ ही मराठी साहित्य में गद्य का विकास भी हुआ। गद्य विधाओं में मराठी नाटक और उपन्यास बहुत प्रसिद्ध हैं। मराठी के उपन्यासकारों में हरिनारायण आप्टे और विष्णु सखाराम खाण्डेकर भारत के प्रमुख उपन्यासकार माने जाते हैं। सम्प्रति मराठी का गद्य पद्य साहित्य अत्यन्त समृद्ध है तथा उसका विकास भी तीव्रगति से हो रहा है। राजनीतिक और सांस्कृतिक केन्द्र होने के कारण मराठी में ज्ञान-विज्ञान का भी लेखन हुआ है।

(नामकरण)

परान्तक

"परम नाशक, परों= शत्रुओं का नाशक"। महाभागवत (67.55) में शिव का नाम "पतिः सर्वस्य सम्पाल्यः पवमानः परान्तकः "। चोल राजवंश के दो राजाओं का नाम।

अद्वेष

" द्वेष से मुक्त", पण्डित आशाधर कृत जिनसहस्रनाम में 82 वाँ नाम। "वीतरागोऽक्षुदद्वेषो निर्मोहो निर्मदोऽगदः"। स्त्रीलिङ्ग रूपः अद्वेषा।

साभार : श्री नित्यानंद मिश्र रचित 'सुनाम-सरित्' से

स्वस्थ मस्तिष्क के लिये पढ़ें हिन्दी

यदि आप अपने मस्तिष्क को चुस्त-दुरुस्त रखना चाहते हैं तो हिन्दी का प्रयोग करिए। देश क वैज्ञानिकों के मुताबिक अंग्रेजी की तुलना में हिन्दी भाषा बोलने से मस्तिष्क अधिक चुस्त रहता है। राष्ट्रीय मस्तिष्क अनुसंधान केंद्र के चिकित्सक एक अनुसंधान के बाद इस नतीजे पर पहुंचे हैं।

उन्होंने कहा है कि हिन्दीभाषी लोगों के लिए मस्तिष्क को चुस्त-दुरुस्त रखने का सबसे बढ़िया तरीका नही है कि वे अधिक से अधिक हिन्दी की किताबें पढ़े और उनका सस्वर पाठन करें अंग्रेजी का प्रयोग आवश्यकता पड़ने पर ही करें विज्ञान पत्रिका 'करंट साइंस' में प्रकाशित अनुसंधान में मस्तिष्क विशेषज्ञों का कहना है कि अंग्रेजी पढ़ते समय दिमाग का सिर्फ बायाँ हिस्सा सक्रिय रहता है जबकि हिन्दी पढ़ते समय मस्तिष्क का दाहिना और बायाँ दोनों हिस्से सक्रिय हो जाते हैं। इससे दिमाग तरो-ताजा रहता है। राष्ट्रीय मस्तिष्क अनुसंधान केन्द्र की भविष्य में अन्य भारतीय भाषाओं के प्रभाव पर भी अध्ययन करने की योजना है। अनुसंधान से जुड़ी डॉ. नन्दिनी के अनुसार इस अध्ययन के पहले चरण में छात्रों से जोर-जोर से अंग्रेजी पढ़ने को कहा गया और फिर हिन्दी।

इस समूची प्रक्रिया में दिमाग का एमआरआई किया जाता रहा। डॉ.नंदिनी के अनुसार मस्तिष्क के परीक्षण से पता चला कि अंग्रेजी पढ़ते समय छात्रों के दिमाग का सिर्फ बायाँ हिस्सा सक्रिय था। क्योंकि अंग्रेजी एक सीध में सीधी पढ़ी जाने वाली भाषा है, इसलिए दिमाग को ज्यादा कसरत नहीं करनी पड़ती। दूसरी तरफ हिन्दी के शब्दों में ऊपर, नीचे और दाएँ-बाएँ लगी मात्राओं के कारण दिमाग को इसे पढ़ने में अधिक कसरत करनी पड़ती है। इससे इसका दाहिना हिस्सा भी सक्रिय हो उठता है। इस अनुसंधान पर जाने-माने मनोचिकित्सक डॉ. समीर पारेख का कहना है कि ऐसा संभव है। हिन्दी की जिस तरह की वर्णमाला है उसके मस्तिष्क को कई फायदे हैं।

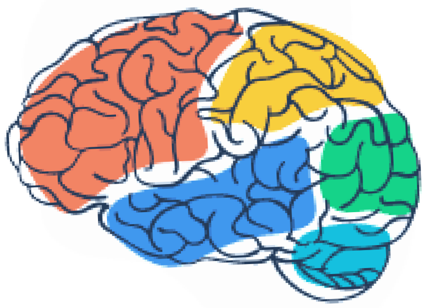

अपौरुषेय वेद

परमेश्वरने ही परावाक् (वेदवाणी) - का निर्माण किया है - ऐसा महाभारत, शान्तिपर्व (२३२|२४) - में स्पष्ट कहा गया है-

अनादिनिधना विद्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा ॥
अर्थात् जिसमेंसे सर्वजगत् उत्पन्न हुआ, ऐसी अनादि वेद-विद्यारूप दिव्य वाणीका निर्माण जगन्निर्माताने सर्वप्रथम किया ।

ऋषि वेदमन्त्रोंके कर्ता नहीं अपितु द्रष्टा ही थे - 'ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः।' निरुक्तकारने भी कहा है- वेदमन्त्रोंके साक्षात्कार होनेपर साक्षात्कारीको ऋषि कहा जाता है- 'ऋषिर्दर्शनात् । ' इससे स्पष्ट होता है कि वेदका कर्तृत्व अन्य किसीके पास नहीं होनेसे वेद ईश्वरप्रणीत ही है, अपौरुषेय ही है। भारतीय दर्शनशास्त्रके मतानुसार शब्दको नित्य कहा गया है । वेदने शब्दको नित्य माना है, अतः वेद अपौरुषेय है यह निश्चित होता है। निरुक्तकार कहते हैं। कि 'नियतानुपूर्व्या नियतवाचो युक्तयः।' अर्थात् शब्द नित्य है, उसका अनुक्रम नित्य है और उसकी उच्चारण-पद्धति भी नित्य है, इसीलिये वेदके अर्थ नित्य हैं। ऐसी वेदवाणीका निर्माण स्वयं परमेश्वरने ही किया है।

शब्दकी चार अवस्थाएँ मानी गयी हैं - (१) परा, (२) पश्यन्ती, (३) मध्यमा और (४) वैखरी । ऋग्वेद (१।१६४।४५) में इनके विषयमें इस प्रकार कहा गया है-

चत्वारि वाक् परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः।
गुहा त्रीणि निहिता नेङ्गयन्ति तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति॥

अर्थात् वाणीके चार रूप होनेसे उन्हें ब्रह्मज्ञानी ही जानते हैं। वाणीके तीन रूप गुप्त हैं, चौथा रूप शब्दमय वेदके रूपमें लोगोंमें प्रचारित होता है।

सूक्ष्मातिसूक्ष्म ज्ञानको परावाक् कहते हैं । उसे ही वेद कहा गया है। इस वेदवाणीका साक्षात्कार महातपस्वी ऋषियोंको होनेसे इसे 'पश्यन्तीवाक्' कहते हैं। ज्ञानस्वरूप वेदका आविष्कार शब्दमय है। इस वाणीका स्थूल स्वरूप ही 'मध्यमावाक्' है। वेदवाणीके ये तीनों स्वरूप अत्यन्त रहस्यमय हैं। चौथी 'वैखरीवाक्' ही सामान्य लोगोंकी बोलचालकी है।

शतपथब्राह्मण तथा माण्डूक्योपनिषद् में कहा गया है कि वेदमन्त्रके प्रत्येक पदमें, शब्दके प्रत्येक अक्षरमें एक प्रकारका अद्भुत सामर्थ्य भरा हुआ है। इस प्रकारकी वेदवाणी स्वयं परमेश्वरद्वारा ही निर्मित है, यह निःशंक है।

शिवपुराणमें आया है कि ॐके 'अ' कार, 'उ' कार, 'म' कार और सूक्ष्मनाद; इनमेंसे (१) ऋग्वेद, (२) यजुर्वेद, (३) सामवेद तथा (४) अथर्ववेद निःसृत हुए। समस्त वाङ्मय ओंकार (ॐ) - से ही निर्मित हुआ । 'ओंकारं बिंदुसंयुक्तम्' तो ईश्वररूप ही है। श्रीमद्भगवद्गीता (७।७) में भी ऐसा ही उल्लेख है- मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव ॥

श्रीमद्भागवत (६।१।४०) में तो स्पष्ट कहा गया है-

वेदप्रणिहितो धर्मो ह्यधर्मस्तद्विपर्ययः।
वेदो नारायणः साक्षात् स्वयम्भूरिति शुश्रुम॥

अर्थात् वेदभगवान्ने जिन कार्योंको करनेकी आज्ञा दी है वह धर्म है और उससे विपरीत करना अधर्म है। वेद नारायणरूपमें स्वयं प्रकट हुआ है, ऐसा श्रुतिमें कहा गया है।

श्रीमद्भागवत (१०।४। ४१) - में ऐसा भी वर्णित है-

विप्रा गावश्च वेदाश्च तपः सत्यं दमः शमः ।
श्रद्धा दया तितिक्षा च क्रतवश्च हरेस्तनूः ॥
अर्थात् वेदज्ञ (सदाचारी भी) ब्राह्मण, दुधारू गाय, वेद, तप, सत्य, दम, शम, श्रद्धा, दया, सहनशीलता और यज्ञ- ये श्रीहरि (परमेश्वर) - के स्वरूप हैं।

मनुस्मृति (२। ५) वेदको धर्मका मूल बताते हुए कहती है-

वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम् ।
आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च॥
अर्थात् समग्र वेद एवं वेदज्ञ (मनु, पराशर, याज्ञवल्क्यादि) - की स्मृति, शील, आचार, साधु (धार्मिक) - के आत्माका संतोष- ये सभी धर्मोके मूल हैं।

याज्ञवल्क्यस्मृति (१। ७) में भी कहा गया है-

श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः ।
सम्यक्संकल्पजः कामो धर्ममूलमिदं स्मृतम् ॥

अर्थात् श्रुति, स्मृति, सत्पुरुषोंका आचार, अपने आत्माकी प्रीति और उत्तम संकल्पसे हुआ (धर्माविरुद्ध) काम - ये पाँच धर्मके मूल हैं। इसीलिये भारतीय संस्कृतिमें वेद सर्वश्रेष्ठ स्थानपर है । वेदका प्रामाण्य त्रिकालाबाधित है।

भारतीय आस्तिक दर्शनशास्त्रके मतमें शब्दके नित्य होनेसे उसका अर्थके साथ स्वयम्भू जैसा सम्बन्ध होता है। वेदमें शब्दको नित्य समझनेपर वेदको अपौरुषेय (ईश्वरप्रणीत) माना गया है।

(शेष अगले अंक में)

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥

एक हमारा उद्देश्य हो, सुसंगत हमारी भावना हो।
एकत्रित हमारे विचार हो, जैसे सब कुछ इस विश्व में एकता में है।

(ऋग्वेद ८.४९.४)

एको धर्मः परं श्रेयः क्षमैका शान्तिरुत्तमा।
विद्यैका परमा दृष्टिरहिंसैका सुखावहा॥

धार्मिकता एक सर्वोच्च चीज है; क्षमा एक सर्वोच्च शांति है; ज्ञान एक सर्वोच्च संतोष है; और परोपकार, एकमात्र सुख।

- विदुर नीति 48

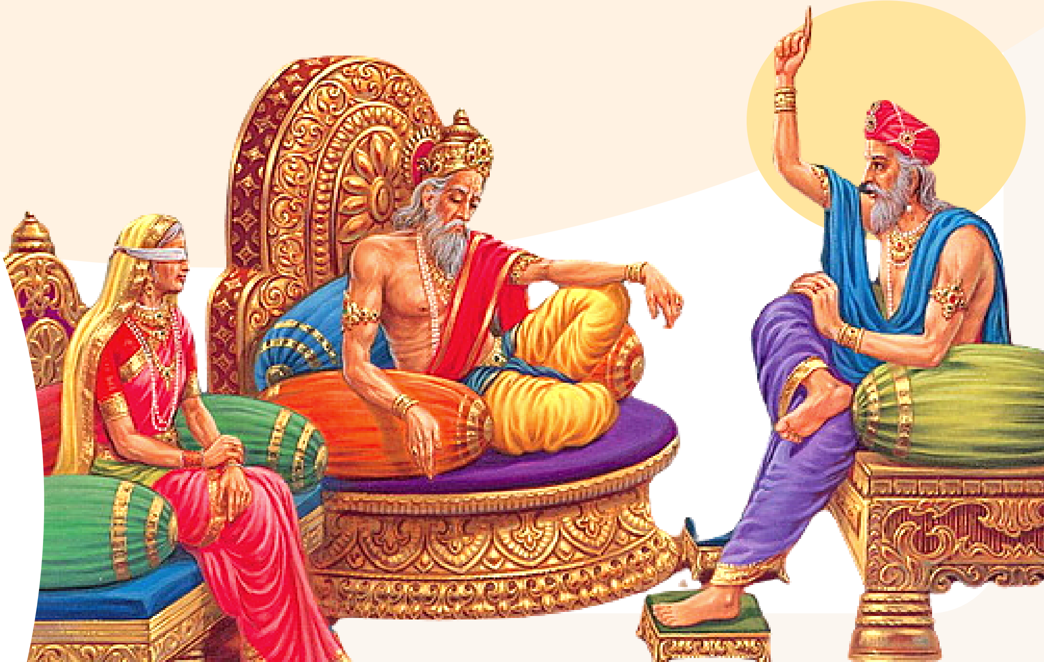

हटा दूर आलस-अँधेरा हुआ है।
उठो सोने वालो! सबेरा हुआ है।

उठो देवियो! वक़्त खोने न देना,
कहीं फूट के बीज बोने न देना;
जगें जो, उन्हें फिर से सोने न देना
कभी राष्ट्र-अपमान होने न देना;

घड़ी शुभ महूरत का डेरा हुआ है।
उठो सोने वालो सबेरा हुआ है।

- 'अवधी सम्राट' राष्ट्रकवि पंडित वंशीधर शुक्ल

('सबेरा हुआ है' कविता के अंश)

“

पुण्य कर्मों से स्वर्ग, पाप कर्मों से नरक, मिथ्या ज्ञान से शाश्वत अंधकार और केवल (वास्तविक) ज्ञान से ही परम पद (मुक्ति) प्राप्त होता है। अतः मनुष्य को (सांसारिक विषयों से) विरक्त होकर (सच्चे) ज्ञान का ही आश्रय लेना चाहिए।

- जगद्गुरु भगवत्पाद माध्वाचार्य

”

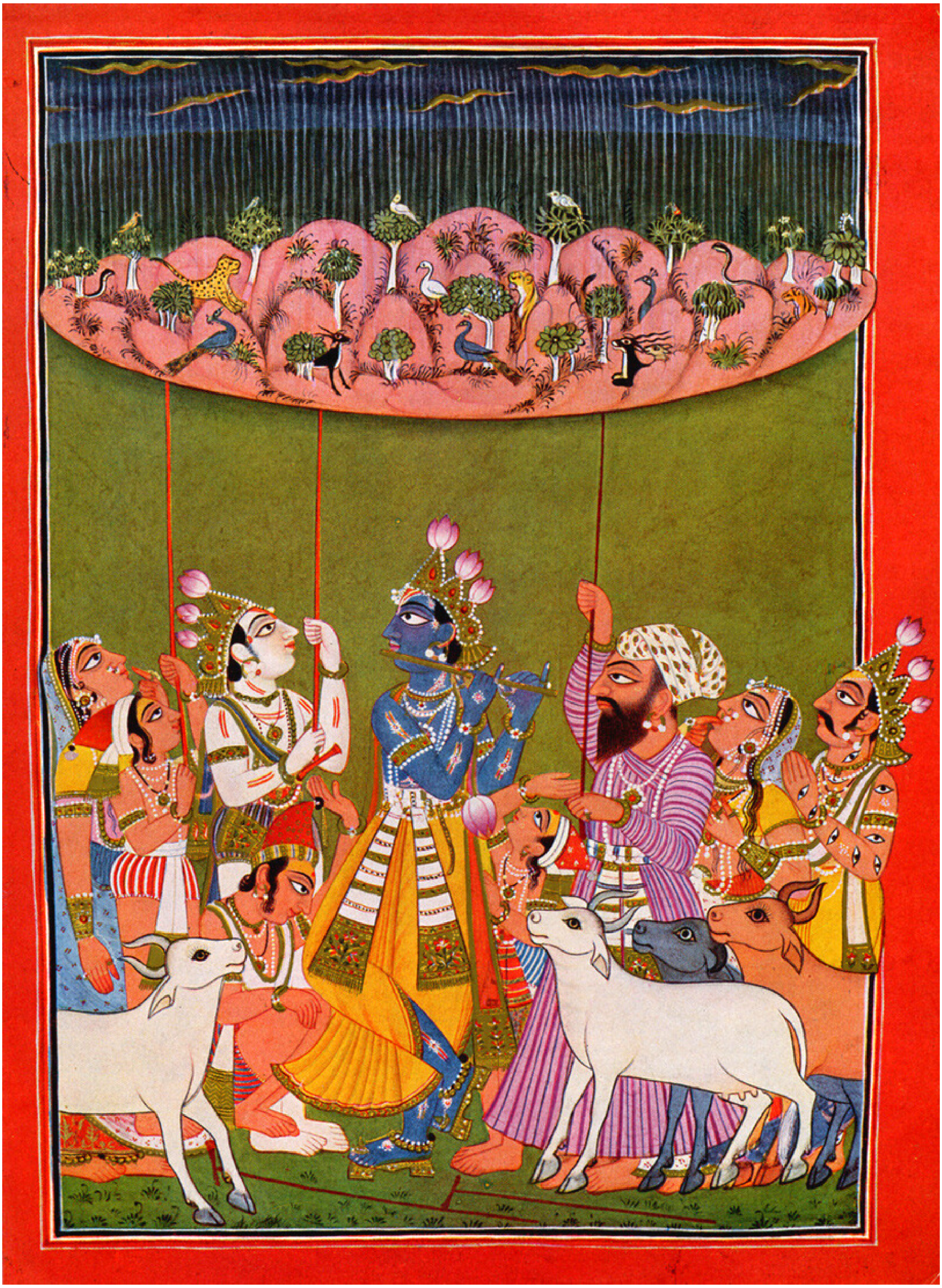

गोवर्धन धारण किए हुए श्रीकृष्ण, भागवत पुराण का चित्रण
(18वीं सदी के प्रारंभ का बशोली चित्र)

बशोली चित्रकला

बशोली चित्रकला के विषय में:

- बशोली चित्रकला की उत्पत्ति जम्मू और कश्मीर के बशोली क्षेत्र में हुई।
- यह लघु चित्रों का एक प्रतिष्ठित विद्यालय है जो अपने आकर्षक चित्रों के लिए जाना जाता है।
- इसे पहाड़ी चित्रकला की पहली पाठशाला माना जाता है।
- संरक्षण: बशोली चित्रकला शैली 17वीं और 18वीं शताब्दी के दौरान स्थानीय शासकों और धनी व्यापारियों के संरक्षण में विकसित हुई।

बशोली चित्रकला की विशेषताएं:

- इसकी विशिष्ट विशेषताएं हैं, इनमें उत्तम ज्यामितीय प्रतिरूप, चमकीले रंग और चमकदार मीनाकारी है।
- प्रयुक्त रंग: गेरूआ पीला, भूरा और हरा मैदान प्रमुख है।
- चित्रों में आकृतियों को समृद्ध वेशभूषा में दिखाया गया है, आकर्षक चेहरे और बड़ी उभरी हुई आँखें इन चित्रों को अद्वितीय व्यक्तित्व प्रदान करती हैं।
- विषय-वस्तु: स्थानीय शासकों, राधा-कृष्ण और माधव-मालती के चित्र भागवत पुराण के विषयों और प्रसंगों को पसंद करते हैं।
- इन्हें प्राकृतिक रंगों और रंगों का उपयोग करके कागज, कपड़े या लकड़ी पर चित्रित किया जाता है।

समुद्र मंथन का बशोली चित्र, वर्ष 1730 ई० का

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥

जब-जब धर्म की हानि होती है और अधर्म की वृद्धि होती है,
तब-तब मैं प्रकट होता हूं (अवतरित होता हूँ)।

श्रीमद्भगवद्गीता 4.7

• माँ महिषासुरमर्दिनी की प्राचीन प्रतिमा

© हिन्दी प्रकोष्ठ (श्री माता वैष्णो देवी विश्वविद्यालय)